मैं तो तेरे पासमें

महोपाध्याय चन्द्रप्रभसागर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मैं तो तेरे पास में

महोपाध्याय चन्द्रप्रभसागर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

फरवरी, १९९०

प्रकाशक
श्री जितयशाश्री फाउंडेशन
९सी, एस्प्लानेड रो ईस्ट
कलकत्ता-७०००६९

मूल्य
पाँच रुपये

मुद्रक
सुराना प्रिंन्टिग वर्क्स
२०५, रवीन्द्र सरणी
कलकत्ता-७

[श्रीमती शान्ता बाई खड्गसिंह हिरण, उदयपुर के सौजन्य से प्रसारित]

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मैं तो तेरे पास में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रार्थना परमात्मा को निमन्त्रण है। उसका स्तर परमात्मा से नीचा नहीं है। प्रार्थना परमात्मा से महान् है। परमात्मा की पूजा-भावना से सजा हृदय स्वयं परमात्मा की ही अभिव्यक्ति है। परमात्मा हमारे इर्द-गिर्द है, दूर से दूर भी। जिसे अपने पास परमात्मा दिखाई दे गया, उसे दूर से दूर भी दिखाई देगा। वह अंधा ब्रह्माण्ड में क्या/कहाँ देखेगा, जो हथेली में पड़ी वस्तु को नजरों में निमन्त्रित नहीं कर सकता। रोशनी की पहचान दिये की आँखों में है, अंधेरे की दीवारों पर नहीं।

परमात्मा बौना है, भूमा भी। यात्री-मन उसे बाहर ढूँढ़ता है और ध्यानी-मन उसे भीतर। वह मात्र मंदिर में ही हो, ऐसी बात में सच्चाई झुठलाती है। जो संसार को भी परमात्मा के कोण से नजर-मुहैया करता है, उसके लिए बाजार भी परमात्मा का घर है। संसार की शराब पीकर मन्दिर में जाना कमल की पंखुरियों पर कीचड़ चढ़ाना है।

मन्दिर तो चित्त की एक भावदशा है। देखो तो सही मन्दिर कितने सारे हैं! हर मन्दिर किसी मान्यता का प्रोत्साहन है। प्रतिमाएँ अलग-अलग हैं, परमात्मा एक है। परमात्मा के अन्तरंग में अलगाववाद की रेखाएँ नपुंसक हैं। प्रतिमा उस परमात्मा को झांकने का मानवीय दर्पण है। आखिर मनुष्य इसी तरह तो परमात्मा के हस्ताक्षरों को छायांकित कर सकता है, अपने छैनी-हथोड़ी थामे हाथों से प्रस्तर की प्रतिमा में। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधि के तीन चरण हैं—एकान्त, मौन और ध्यान। एकान्त संसार से दूरी है, मौन अभिव्यक्ति से मुक्ति है और ध्यान विचारों से निवृत्ति है। घर भर के सभी सदस्य अपने-अपने काम से बाहर गए हुए हैं। हम घर में अकेले हैं। यह हमारे लिए एकान्त का अवसर है। कुछ समय के लिए घर भी गुफा का एकान्तवास का मजा दे सकता है। अभिव्यक्ति रुकी, तो दोस्ती-दुश्मनी के सामाजिक रिश्ते अधूरे थमे रहे गये। भला, गूंगों का कोई समाज/सम्बन्ध होता है। जब किसी से कुछ बोलना ही नहीं है, तो विचार क्यों/कैसे तरंगित होंगे। निर्विचार-ध्यान ही समाधि का प्रवेश-द्वार है।

व्यक्ति रात-भर तो मौन का साधक बनता ही है, किन्तु वह सोये-सोये। दिन में नींद नहीं होती, जाग होती है, पर मन बड़बोला रहता है। अध्यात्म में प्रवेश के लिए एकान्त उपयोगी है और मौन भीड़ में भी अकेले रहने की कला है। जीवन में मौन अपना लेने से व्यावहारिक झगड़े तथा मुसीबतें भी कम हो जाएँगी।

मौन वैचारिक शक्ति का ह्रास नहीं; अपितु उसका एकत्रीकरण है। भाषा आन्तरिक ऊर्जा को बाहर निकाल देती है, किन्तु मौन ऊर्जा-संचय का माध्यम है। बहिर्जगत से अन्तर्जगत में प्रवेश के लिए मौन द्वार है। स्वयं की नई शक्तियों का आविर्भाव करने के लिए मौन प्राथमिक भूमिका है। इसलिए मौन अपने आप में एक ध्यान-साधना है। यह वाणी-संयम का प्रहरी है, शक्ति-संचय करने वाला भण्डार है, सत्य को अनुक्षण बनाए रखने वाला मन्त्र है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधक का जीवन संघर्ष, अहिंसा एवं सत्यविजय की एक अभिनव यात्रा है। वह शत्रुंजयी एवं मृत्युंजयी है। सिद्धाचल के शिखरों पर आरोहण करते समय चूकने/फिसलने का खतरा सदा साथ रहता है। पथ-च्युति चुनौती है, किन्तु प्रत्येक फिसलन एक शिक्षण है। अप्रमत्तता तथा जागरूकता पथ की चौकशी है। प्रज्ञा-संप्रेक्षक और आत्म-जागृत पुरुष हर फिसलन के पार है। संयम-यात्रा को कष्टपूर्ण जानकर पथ-तट पर बैठ जाना संकल्प-शैथिल्य है। जागरूकतापूर्वक साधना-मार्ग पर बढ़ते रहना तपश्चर्या है। साधक के लिए सिद्धि ही सर्वोपरि कृत्य है। जीवन ऊर्जा को समग्रता के साथ साधना में एकाग्र करने वाले के लिए कदम-कदम पर मंजिल है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवन श्वाँस की परिक्रमा है। इसकी पूर्णाहुति मृत्यु के द्वार पर दस्तक है। जागरूकता जीवन की जरूरत है और तन्द्रा मृत्यु की। जीवन तो तन्द्रा के उस पार है। तन्द्रा एक निद्राभरी खुमारी है। निद्रा मृत्यु की छोटी/मीठी लोरी है। इसे सभी तन्मयता से सुनते हैं और उससे अपनी पहचान बढ़ाते हैं। जो इसे समझ जाते हैं, वे मृत्यु के 'पूतना'-द्वार पर भी बोधपूर्वक जीते हैं। मृत्यु के बारे में दिमाग की श्वाँस-नली में चिन्तन को उतारते रहना जीवन का भगोड़ापन नहीं, वरन् जीवन की एक नजर-मुंदी हकीकत को स्वयं के हाथों से पहचानने का साहस है।

जीवन की यात्रा मृत्यु की ओर बढ़ती जाती है। कफन ही उसका असली वस्त्र है और चिता उसकी शय्या। मैं तो क्या, हर कोई खड़ा है मृत्यु की कतार में। कतार सरकती जा रही है मरघट की ओर। जैसा जीवन जिया जा रहा है, वह जीवन नहीं, जीवन का उपहास है। जीवन के नाम पर मनाया जाने वाला जन्म दिन मृत्यु की ओर से मुबारकवाद है। काश! दुनिया समझ सके नजदीक आती मृत्यु का यह मधुर व्यंग्य। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संसार नदी-नाव का संयोग है। अतः किसके प्रति आसक्ति और किसके प्रति अहं-भूमिका! योनि-योनि में निवास करने के बाद कैसा जातिमद, सम्बन्धों का कैसा सम्मोहन? जब शरीर भी अपना नहीं है, तो किसका परिग्रह और किसके प्रति परिग्रह-बुद्धि? काम-क्रीड़ा आत्मरंजन है या मनोरंजन? संयम-पथ पर पाँव वर्धमान होने के बाद असंयम का आलिंगन—क्या यही साधक की साध्यनिष्ठा है?

जीवन स्वप्नवत् है। सारे सम्बन्ध सांयोगिक हैं। माता-पिता हमारे अवतरण में सहायक के अतिरिक्त और क्या हो सकते हैं? पति और पत्नी विपरीत के आकर्षण में मात्र एक प्रगाढ़ता है। बच्चे पंख लगते ही नीड़ छोड़कर उड़ने वाले पंछी हैं। बुढ़ापा आयु का बन्दीगृह है। यह मर्त्य शरीर हाड़-माँस का पिंजरा है। मनुष्य तो निपट अकेला है। पति-पत्नी की तरह साथ रहना जीवन की एक आवश्यकता मानी जाती है, पर क्या कोई इस बात की चुनौती कर सकते हैं कि वह बहुत सुखी जीवन जी रहे हैं? नहीं कर सकते। फिर धर्म-पथ से स्खलन कैसा? धर्म आत्म-आश्रित है, शेष लोकाचार है, धूप-छाँह-सा आँख-मिचौनी का खेल। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधक आत्मदर्शन के लिए सर्वतोभावेन समर्पित होता है। अतः शारीरिक मूर्च्छा से ऊपर उठना भेद-विज्ञान की क्रियान्विति है। शरीर और आत्मा के मध्य युद्ध चल रहा है। दोनों के बीच युद्ध-विराम की स्थिति का नाम ही उपवास है। जीवन, जन्म एवं मृत्यु के बीच का एक स्वप्नमयी विस्तार है। स्वप्न-मुक्ति का आन्दोलन ही संन्यास है। जीवन एवं जगत् को स्वप्न मानना अनासक्ति प्राप्त करने की सफल पहल है। अनासक्ति/अमूर्च्छा साधना-जगत् की सर्वोच्च चोटी है और इसे पाने के लिए भौतिक सुख-सुविधाओं की नश्वरता का हर क्षण स्मरण करना स्वयं में अध्यात्म का आयोजन है।

संसार की अनित्यता का चिन्तन करना निर्मोह होने का पहला सोपान है। संसार में हमें जो स्थिरता दिखाई देती है वह सत्य नहीं, दृष्टि-भ्रम है।

जिसने संसार के रहस्य और स्वभाव को समझ लिया, वह बाहरी चकाचौंध से हटकर अन्तर्यामी रस लेगा, वह स्वयं में अपना तीर्थ देखेगा तथा स्वयं ही अपना तीर्थङ्कर बनेगा। वास्तव में अन्तर्यात्रा ही तीर्थयात्रा है, वहीं सारे तीर्थ विद्यमान हैं। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विश्व में कोई भी योजना अधूरी नहीं है। मनुष्य तो क्या पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े भी भूखे नहीं मरते। बच्चे को भूख लगनी स्वाभाविक है, किन्तु उसकी आपूर्ति अस्वाभाविक नहीं है। जिसने बच्चे के पेट में भूख दी है, उसने माता के स्तनों में दूध भी भरा है। जहाँ-जहाँ प्राण हैं, वहाँ-वहाँ उसकी प्रबन्ध-समिति सुगठित है। सुरक्षा के भी तो साधन हैं। फूल की सुरक्षा के लिए काँटों की अंगरक्षक टुकड़ियाँ भी हैं। ढ़ेरसारे तजुर्बे आत्मसात् हो जाने के कारण इस बात पर मेरे विश्वास को लुढ़काया नहीं जा सकता।

(किसी योजना को साकार करने में संघर्ष करना पड़ सकता है, समय के फासले भी सम्भव हैं, असफलता का भ्रम भी हो सकता है, पर सोलह-सोलह वार फिसलने के बाद आखिर मकड़ी अपने घर तक पहुँच ही जाती है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्म, ज्ञान, संयम, निर्वाण ही निखिल लोक का नवनीत है। आत्मा की मौलिकताएँ प्रच्छन्न हैं। उन्हें अनावरित एवं निरभ्र करना ही जीवन में अध्यात्म की गुणवत्ता का आकलन है।

सबके जीवन का ताना बाना समान हैं, किन्तु अनुभव एवं निष्कर्ष प्रत्येक मनुष्य के अलग-अलग होते हैं। जो निष्कर्ष नहीं निकाल पाते, उन्हें जीवन का पाठ पढ़ने के लिए पुनः लौटकर आना पड़ता है। पुनर्जन्म का यही रहस्य है।

आज का मनुष्य औसतन बुद्धि वाला है, इसलिए उसके पास चाबी तो है पर ताला नहीं मिल रहा है। उन्होंने कहा कि जो व्यक्ति क्षमा और मुक्ति-भावना का चिंतन करता है, किन्तु क्रोध और वासना का आचरण करता है, उसे समझदार नहीं कहा जा सकता।

मन में जितनी गहरी वासना है, उतनी ही गहरी मुक्ति की भावना होगी तभी पुनर्जन्म की जड़ उखड़ सकती है। जीवन का फूल सोये-सोये न मुरझा जाये, इसके लिए सावचेत रहना जीवन-कर्त्तव्य है। प्राप्त क्षण को बेहोशी में भुला बैठना वर्तमान को ठुकराना है। वर्तमान का अनुपश्यी ही अतीत के नाम पर भविष्य का सही इतिहास लिख पाता है। वर्तमान से हटकर केवल भूत-भविष्य के बीच जीवन को पैंडुलम की तरह चलाने वाला अधर में है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्धकार में प्रकाश की क्रान्ति का नाम ही सत्संग है।

समर्पण के बीज से ही सत्संग का फूल खिलता है। सत्संग जीवन में सद्गुरु एवं सज्जनता का इंकलाब है। मूढ़ पुरुष सद्गुरु का सामीप्य प्राप्त करने के बाद भी धर्म को वैसे ही नहीं जान सकता जैसे चम्मच दाल के रस को। किन्तु सरल और विज्ञ पुरुष सद्गुरु के क्षणिक मिलन से ही धर्म को उसी प्रकार जान लेता है जैसे जीभ दाल के रस को।

सत्संग हृदय की नौका है। सत्संग करते समय कोरे कागज की तरह स्वयं की प्रस्तुति अध्यात्म लेखन की सही तैयारी है। सद्गुरु शास्त्रीय तथ्यों का जीवन्त साक्षात्कार है। परमात्म-दर्शन के लिए सद्गुरु की शरण प्राथमिक साधना है। जिसके सम्पर्क से अन्तर का बुझा हुआ दीपक ज्योतिर्मय हो जाये, वही सद्गुरु है। मानव की अन्तर-निद्रा को तोड़ना ही सद्गुरु का दायित्व है। सद्गुरु ही सत्संग को स्थिरता प्रदान करता है और जीवन-मुक्ति के लिए यह जरूरी भी है। ज्ञानी का सत्संग ज्योतिर्मय दीपक के सम्पर्क के समकक्ष है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्मों की खेती कषाय और विषय-वासना के बदौलत होती है। राग और द्वेष कर्म के बीज हैं। कर्म जन्म-मरण का हलधर है। जन्म-मरण से ही दुःख की तिक्त तुम्बी फलती है। और, दुःख संसार की वास्तविकता है। मुनि-जीवन वीतरागता का अनुष्ठान है। इसलिए यह संसार से दूरी है।

मात्र बाह्य वेश परिवर्तन से आन्तरिक जीवन परिष्कृत नहीं हो सकता। बहिरङ्ग एवं अन्तरङ्ग की एक-रूपता ही साधना की मौलिकता है।

जीवन परिवर्तन के लिए अंतरदृष्टि को बदलना आवश्यक है। आचरण से अन्तस् नहीं बदला जा सकता, किन्तु अन्तस् के बदलते ही आचरण तत्क्षण बदलना शुरू हो जाता है।

जीवन में सत्य का प्रगटन श्रद्धा से होता है, विश्वास से नहीं। विश्वास गोद लिया हुआ सत्य है और श्रद्धा जन्म दिया हुआ। विश्वास का जन्म तर्क और बुद्धि से होता है, किन्तु श्रद्धा, हृदयवीणा की झंकृति है। जब ज्ञान श्रद्धा के माध्यम से आचरण की पहल करता है, तब सम्यक् चारित्र का निर्माण होता है।

श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र की साधना अध्यात्मजगत् में ब्रह्मा, विष्णु और शंकर की प्रतीकात्मक आराधना है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जो व्यक्ति सत्य की शोध-यात्रा पूरी कर लेता है, सत्य के एवरेस्ट पर आरोहण कर लेता है, संसार में उसकी विजय के बिगुल बज उठते हैं। जिन्होंने सत्य के ग्लोब का चप्पा-चप्पा छान मारा, सत्य के सागर की एक-एक बूँद को देख-समझ लिया, उनका मंच महात्मा से भी ऊँचा है।

सत्य की राह पर चलने वाले वास्तव में अमरता की राह पर चल रहे हैं। सम्भव है सत्य का पालन करने वाले को फाँसी का फन्दा मिल जाए, पर सच्चाई को फाँसी के फंदे पर नहीं लटकाया जा सकता। फाँसी का फंदा और जहर का प्याला, कोड़े और गालियाँ सच्चाई की कसौटी हैं। जो इस कसौटी पर खरा उतरता है, सत्य उसे कभी मरने नहीं देता। वह उसके बसन्ती चोले को अमरता के केशरिया रंग से रंग देता है।

सत्य जीवन की आखिरी मंजिल है। इसे पाने के लिए लाखों-करोड़ों रुपये तो क्या जीवन और प्रतिष्ठा को भी दाँव पर लगाना पड़ सकता है। सत्य के लिए जहरीले घूँट पीने पड़ सकते हैं। काला पानी की सजा भुगतनी पड़ सकती है। जेलों में सड़ना पड़ सकता है। सत्य मौके पर सर्वस्व बलिदान चाहता है। बलिदान ही सत्य-प्राप्ति की कीमत है। जो लोग हर प्रकार की कीमत को चुकाने के लिए तैयार हैं, वे ही सत्य की परमता, शिवता और भगवत्ता का माथा चूम सकते हैं। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य का जन्म अनिश्चितता की गोद में होता है। जीवन विकास नहीं अपितु क्षणभंगुर होती ज्योति का इतिहास है। परिवर्तन के हर क्षण में ध्रुवता कायम रहती है जो भविष्य की कोख से पैदा होने वाले क्षण पर जीवन या मृत्यु की मुहर लगाती है।

जिनकी दृष्टि ध्रुव एवं शाश्वत-तत्त्व पर टिकी रहती है, वे अनित्यता एवं मृत्यु के बीच भी नित्य एवं अमरता का अनुभव करते हैं।

जीवन में प्रगति हमारी जीवंतता है, किन्तु जो लोग कोल्हू के बैल की तरह वर्तुलाकार गति करते हैं, वे कहीं भी नहीं पहुँच सकते।

व्यक्ति को संघर्ष से घबराना नहीं चाहिये। अपने संकल्प के लिए संघर्ष करना हमारा आत्मबल का अभिनन्दन है। ईमानदारी से संकल्प के लिए संघर्ष किया जाए तो सफलता जरूर मिलती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पर्यावरण अस्तित्व का अपर नाम है। प्रकृति उसका अभिन्न अङ्ग है। उस पर मँडराने वाले खतरे के बादल हमारे ऊपर बिजली का कौंधना है। इसलिए उसका पल्लवन या भंगुरण समग्र अस्तित्व को प्रभावित करता है।

प्रकृति, पर्यावरण और समाज सभी एक-दूसरे के लिए हैं। इनके अस्तित्व को बनाये रखने के लिए किया जाने वाला श्रमदान स्वयं के जीवन को भयमुक्त करने का पुनीत अभियान है।

पर्यावरण का रक्षण अहिंसा का जीवन्त आचरण है। हमारे किसी क्रिया-कलाप से उसे क्षति पहुँचती है, तो वह आत्म-क्षति ही है। सभी जीव सुख के अभिलाषी हैं। भला, अपने अस्तित्व की जड़ें कौन उखड़वाना चाहेगा? अहिंसा ही माध्यम है, पर्यावरण के संरक्षण एवं पल्लवन का।

पर्यावरण का अस्तित्व स्वस्थ एवं संतुलित रहे, इसके लिए साधक का जागृत और समर्पित रहना साध्य की ओर चार कदम बढ़ाना है। दूसरों का छेदन-भेदन-हनन न करके अपनी कषायों को जर्जरित कर हिंसा-मुक्त आचरण करना साधक का धर्म है। इसलिए अहिंसक व्यक्ति पर्यावरण का सजग प्रहरी है।

पर्यावरण और अहिंसा की पारस्परिक मैत्री है। इन दोनों का अलग-अलग अस्तित्व नहीं है, सहअस्तित्व है। हिंसा का अधिकाधिक न्यूनीकरण ही स्वस्थ समाज की संरचना में स्थायी कदम है। भाईचारे का आदर्श मनुष्येत्तर पेड़-पौधों के साथ स्थापित करना अहिंसा/साधना की आत्मीय प्रगाढ़ता है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिंदगी चेतना की उलझी हुई पहेली है। जहाँ-जहाँ जिन्दगी है, वहाँ-वहाँ चेतना है। जहाँ-जहाँ चेतना है, वहाँ-वहाँ समभाव की परछाई उभरती हुई दिखाई देती है। जिन्दगी की यह माँग है कि वह विक्षोभों से दूर रहे और साम्य-स्थिति को गले लगाए। विक्षोभ हमेशा आक्रोश, क्रोध, वध, उत्तेजना और संवेदना के कारण जनमता है। मानव तो क्या एक कीड़ा-मकोड़ा भी स्वयं को साम्यावस्था में बनाए रखने की चेष्टा करता है।

न केवल चेतनामूलक जीवन, बल्कि स्नायुओं में भी साम्य दशा जरूरी है। चेतना और स्नायु का काम भीतरी तनाव को कम कर साम्य-दशा के लिए श्रम करना है। आन्तरिक विक्षोभों, उत्तेजनाओं और संवेदनाओं को शान्त करना तथा समत्व को मन में प्रतिष्ठित करना जीवन का बसन्त है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहिंसा और निर्विकारिता का नाम ही अध्यात्म है। साधक अध्यात्म का अध्येता होता है। अतः हिंसा और विकारों से उसकी कैसी मैत्री! विकार/वासना/भोग-सम्भोग स्वयं की अ-ज्ञान दशा है। साधक तो 'आगमचक्षु/ज्ञानचक्षु' कहा जाता है, अतः इनका अनुगमन अन्धत्व का समर्थन है।

साधक का परिचय-पत्र अप्रमाद ही है। अप्रमाद और अपरिग्रह दोनों जुड़वा हैं। मूर्च्छा परिग्रह है। मूर्च्छा का ही दूसरा नाम प्रमाद है। प्रमाद हिंसा का स्वामी है। अतः मूर्च्छा से उपरत होना अध्यात्म की सही आराधना है।

मूर्च्छा एक अन्धा मोह है। वह अनात्म को आत्मतत्त्व के स्तर पर ग्रहण करता है। यह मिथ्यात्व का मंचन है। आत्मतत्त्व और अनात्म-तत्त्व का मिलन विजातीयों का संगम है। दोनों में विभाजन-रेखा खींचना ही भेद-विज्ञान है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्यात्म आत्म-उपलब्धि का अनुष्ठान है। अनुष्ठाता को स्वयं का दीपक स्वयं को ही बनना पड़ता है। 'स्वयं' 'अन्य' का ही एक अंग है। अतः दूसरों में स्वयं की और स्वयं में दूसरों की प्रतिध्वनि सुनना अस्तित्व का अभिनन्दन है। दूसरों में स्वयं का अवलोकन ही अहिंसा का विज्ञान है। सम्पूर्ण अस्तित्व का अन्तर्सम्बन्ध है। क्षुद्र से क्षुद्र जीव में भी हमारी जैसी आत्मचेतना है। अतः किसी को दुःख पहुँचाना स्वयं के लिए दुःख का निर्माण करना है। सुख का वितरण करना अपने लिए सुख का निमंत्रण है। जीव का वध अपना ही वध है। जीव की करुणा अपनी ही करुणा है। अतः अहिंसा का अनुपालन स्वयं का संरक्षण है।

मनुष्य स्वभाव से विकृति-प्रेमी होता है। अच्छे शब्द और अच्छे कर्म उसे सीखने पड़ते हैं। अपने व्यक्तित्व में अच्छाइयों को प्रतिष्ठित करना ही जीवन की उज्ज्वल साधना है।

एकान्त में किया गया अपराध या पाप भी व्यक्ति के लिए उतना ही अहितकर है जितना छुपकर किया हुआ विषपान। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'स'म्यक्त्व' अध्यात्म-दर्शन की वर्णमाला का प्रथम अक्षर है। यही सत्य की शाश्वत अभिव्यक्ति है। यह वह चौराहा है, जिसमें अध्यात्म-जगत के कई राज-मार्ग मिलते हैं। अतः सम्यक्त्व के लिए पराक्रम करना महापथ का अनुगमन/अनुमोदन है।

सम्यक्त्व विशेषणों का विशेषण है, आभूषणों का भी आभूषण है। यह सत्य की गवेषणा है। साधक आत्म-गवेषी है। आत्मा ही उसके लिए परम-सत्य है। इसलिए सम्यक्त्व साधक का सच्चा व्यक्तित्व है। उसकी आँखों में सदा अमरता की रोशनी रहती है। कालजयी क्षणों में जीने के लिए उसका जीवन समर्पित है। कालजयता के लिए अस्तित्व का अभिज्ञान अनिवार्य है। अस्तित्व शाश्वत का घरेलु नाम है। सम्यक्त्व उस शाश्वत की ही पहिचान है।

अस्तित्व का समग्र व्यक्तित्व सम्यक्त्व की खुली खिड़की से ही समीक्ष्य है। अध्यात्म का अध्येता सम्यक्त्व से अपरिचित रहे, यह संभव नहीं है। व्यक्ति के सुषुप्त विवेक में हरकत पैदा करने वाला एक मात्र सम्यक्त्व ही है। यथार्थता का तट, सम्यक्त्व का द्वीप मिथ्यात्व के पार है। हृदय-शुद्धि, अहिंसा, संवर, कषाय-निग्रह एवं संयम की पतवारों के सहारे असद्-सागर को पार किया जा सकता है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'सम्यक्त्व' साधुता और ध्रुवता की दिव्य आभा है। सम्यक्त्व और साधुता के मध्य कोई द्वैत-रेखा नहीं है। साधु सम्यक्त्व के बल पर ही तो संसार की चार-दिवारी को लाँघता है। इसलिए सम्यक्त्व साधु के लिए सर्वोपरी है।

सम्यक्त्व आत्म-विकास की प्राथमिक कक्षा है। वस्तु-स्वरूप के बोध का नाम सम्यक्त्व है। बिना सम्यक्त्व के साधक वस्तु-मात्र की अस्मिता का सम्मान कैसे करेगा? पदार्थों का श्रद्धान कैसे किलकारियाँ भर सकेगा? अहिंसा और करुणा कैसे संजीवित हो पायेगी? अध्यात्म की स्नातकोत्तर सफलताओं को अर्जित करने के लिए सम्यक्त्व की कक्षा में प्रवेश लेना अपरिहार्य है।

साधक की सबसे बड़ी सम्पदा सम्यक्त्व ही है। आत्म-समीक्षा के वातावरण में इसका पल्लवन होता है। सम्यक्त्व अन्तर्दृष्टि है। इसका विमोचन बहिर्दृष्टियों को संतुलित मार्गदर्शन है। फिर वे सत्य का आग्रह नहीं करतीं, अपितु सत्य का ग्रहण करती हैं। माटी-सोना, हर्ष-विषाद के तमाम द्वन्द्वों से वे उपरत हो जाती हैं। इसी से प्रवर्तित होती है सत्य की शोध-यात्रा। बिना सम्यक्त्व के अध्यात्म-मार्ग की शोभा कहाँ! भला, ज्वर थामे पुरुष को माधुर्य कभी रसास्वादित कर सकता है? असम्यक्त्व/मिथ्यात्व जीवन का ज्वर नहीं तो और क्या है? सचमुच, जिसके हाथ में सम्यक्त्व की मशाल है, उसके सारे पथ ज्योतिर्मय हो जाते हैं। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवन एक प्रतिस्पर्धा है। प्रत्येक व्यक्ति महत्त्वाकांक्षी है। इसलिए जीवन की प्रतिस्पर्धा गलाघोंट संघर्ष का रूप लेती है। प्रार्थना की वेला में व्यक्ति संसार के कल्याण की कामना करता है, लेकिन रोजमर्रा जिन्दगी में वह दूसरों को पछाड़ने का ही काम कर रहा है। जबकि हमें ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहिये, जिससे किसी दूसरे व्यक्ति की भावना को ठेस पहुँचे।

स्वयं के दोषों का निरीक्षण और दूसरों के गुणों का पर्यावलोकन करना उज्ज्वल व्यक्तित्व की पहचान है। दुर्जन में भी दबे/छिपे गुण को ढूँढ/परख निकालने की जौहरी-नजर ही स्वयं की सज्जनता है। रावण में भी भगवान् का सौम्य दर्शन कर लेना पराशक्ति की प्राप्ति का पूर्व अभियान है।

यदि किसी व्यक्ति में कोई दोष दिखाई पड़े तो उसे अकेले में उस दोष की जानकारी देनी चाहिए। पीठ पीछे किसी व्यक्ति के दोष की बातें करना सबसे बड़ा दोष है।

जीवन की सार्थकता आन्तरिक दोषों को समझकर उनका निवारण करने तथा जीवन में सद्भावना को प्रतिष्ठित करने में है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधुता दूसरों का मौन-धन्यवाद पाने का उपक्रम है। जीवन में साधुता इतनी निखर जाये कि उसकी मौजूदगी प्रभाव बने और अनुपस्थिति मरघट-वीरान लगाए। जिस गली से गुजरो, अगर वहाँ कई हाथ-आँखें धन्यवाद कहती हुई कृतज्ञ न हो जाये, तो गली से गुजरना न-गुजरना समान है। मानव में दानवता/असाधुता न हो, यह शुभ है, किन्तु मानवता हो, यह उसकी विशेषता हो। फूल का दुरभिभरा न होना ही पर्याप्त नहीं है। सुरभि की छटा आकर्षण के लिए आवश्यक है। इस सुरभि का ही दूसरा नाम साधुता है।

साधुता जीवन के परमार्थ का उपनाम है। स्वयं पर आने वाले कष्टों से पिघलना स्वार्थ है, पर दूसरों पर आए हुए कष्टों को देखकर द्रवित होना परमार्थ है। साधु इस परमार्थ का पर्याय है। जिन्होंने अपने आपको यह दर्जा दिया है, वे सब साधु/सज्जन/गुणसाधक/संत हैं। सिद्धत्व में प्रवेश करने के लिए ऐसा संत जीवन प्रथम सोपान है। साधु-पुरुषों को किया जाने वाला नमन विश्व की समस्त अच्छाइयों का सार्वभौम सम्मान है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हमारे कार्यकलापों का परिसर बहुत बढ़-चढ़ गया है। उसकी सीमाएँ अन्तरिक्ष तक विस्तार पा चुकी हैं। मिट्टी, खनिज-पदार्थ, जल, ज्वलनशील पदार्थ, वायु, वनस्पति आदि हमारे जीवन की आवश्यकताएँ हैं। किन्तु इनका छेदन-भेदन-हनन इतना अधिक किया जा रहा है कि दुनिया से जीवित प्राणियों की अनेक जातियों का व्यापक पैमाने पर लोप हुआ है।

प्रदूषण-जैसी दुर्घटना से बचने के लिए पेड़-पौधों एवं पशु-पक्षियों की रक्षा अनिवार्य है। इसी प्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि के प्रदूषणों से दूर रहने के लिए अस्तित्व-रक्षा/अहिंसा अपरिहार्य है।

मनुष्य को पृथ्वी के सारे तत्व पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिये। वह पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, जीव-जन्तु, मनुष्य आदि पर्यावरण के किसी भी अङ्ग को न नष्ट करे, न किसी और से नष्ट करवाये और न ही नष्ट करने वाले का समर्थन करे। वह संयम में पराक्रम करे। जो पर्यावरण का विनाश करता है, वह हिंसक है। समझदार लोग हिंसा को कतई पसन्द नहीं करते। संघर्षमुक्त समत्वनियोजित स्वस्थ पर्यावरण विश्व-शान्ति कायम/कामयाब करने के लिए वह पहल है, जिसमें चूक की प्रेत-छाया सम्भावित नहीं है। सम्पूर्ण विश्व के साथ दोस्ती का हाथ फैलाना अध्यात्म एवं समाधि के शिखरों को पाने के लिए तलहटी पर आने की तैयारी है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मृत्यु मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। मरना मेरी शहीदी है। शहीदी कहीं छलावा न हो जाये, अतः जीवन को गहराई से चूमें। यही तो गलियारा है उस तक पहुँचने का। यही द्वार है अज्ञेय में प्रवेश का। मृत्यु भी आखिर होगी कहाँ! जर्जर चोले को बदलना ही क्या मृत्यु है? एक और जीवन भी तो है रोजमर्रा के जीवन से हटकर। जिसे मृत्यु मार नहीं सकती। मैं भी नहीं मार सकता। फिर आँखमिचौनी कैसी क्षणभंगुरता की शाश्वतता के साथ। जीवन की बाती पर ज्योति की शाश्वतिका पुलकित है। ज्योति का निर्धूम और निष्कम्प होना ही निर्वाण की शाश्वत मुस्कान है। गोताखोर खोजें शाश्वत को, शाश्वत के लिए, शाश्वत में। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवन की आपाधापी में मनुष्य जब तक व्यस्त रहता है, उसे मृत्यु की पदचाप सुनाई नहीं देती। संन्यास की परिणति मृत्यु की प्रतीति से होती है। संन्यास जीवन-क्रान्ति है। निवृत्ति इसी का उपनाम है। वृत्ति संसार से जुड़ना है और निवृत्ति संसार से बिछुड़ना। वृत्ति जीवन-ऊर्जा की बहिर्यात्रा है। निवृत्ति उस यात्रा में रुकावट है। ऊर्जा को बाहर जाने से रोकने का नाम ही निवृत्ति है। इसलिए वृत्ति संसार से राग है और निवृत्ति संसार से विराग। परावृत्ति वृत्ति से ही परे होना है। यह संसार का विराग नहीं है, बल्कि अपने भीतर लौटना है।

निवृत्ति संसार को त्यागना है और परावृत्ति स्वयं को सम्हालना। संसार को त्यागने से ही स्वयं को सम्हाला नहीं जा सकता। पर हाँ! स्वयं को सम्हालने से संसार अपने आप छूट जाता है। इसलिए परावृत्ति जीवन की आन्तरिक ऊँचाई को पाने की स्वीकृति है। निवृत्ति सही अर्थों में परावृत्ति के बाद ही घटित होती है। संन्यास की शुरुआत परावृत्ति से होती है।

साधक का सारा लक्ष्य वीतराग से जुड़ा हुआ है। परावृत्ति और वीतराग दोनों को एक ही समझें। भले ही लगे दोनों अलग-अलग, पर हैं दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू।

साधना की वास्तविकता वीतराग-विज्ञान है। राग, संसार से जुड़ना है और विराग उससे टूटना। वीतराग तो स्वयं की शोध-यात्रा है। अपने आपको पूर्णता देना ही वीतराग का परिणाम है।

राग संसार है और विराग संन्यास। वीतराग राग और विराग दोनों से ही पार है। यह दोनों से ऊपर की स्थिति है। ईश्वर का सारा ऐश्वर्य इसी में है। यह परम पद है। ऐसा पद है, जहाँ पद को लेकर राजनैतिक उठापटक नहीं है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्यात्म जीवन का चरम शिखर है। आत्मविश्वास एवं सत्यबोध का स्वामी ही इस शिखर की ओर कदम बढ़ा सकता है। अध्यात्म की मौलिकताओं एवं नैतिकता के प्रतिमानों को जीवन में ढालना ही आत्म-विजय की प्रतीक है।

जिसने मन, वचन और काया के द्वार बन्द कर लिए हैं, वही सत्य का पारदर्शी और मेधावी साधक है। उसे इन द्वारों पर अप्रमत्त चौकी करनी होती है। उसकी आँखों की पुतलियाँ अन्तर्जगत के प्रवेश-द्वार पर टीकी रहती हैं। बहिर्जगत के अतिथि इसी द्वार से प्रवेश करते हैं। अयोग्य और अनचाहे अतिथि द्वार खटखटाते जरूर हैं, किन्तु वह तमाम दस्तकों के उत्तर नहीं देता, मात्र सच्चाई की दस्तक सुनाता है। वह उन्हीं लोगों की अगवानी करता है, जिससे उसके अंतर-जगत का सम्मान और गौरव वर्धन हों। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काजल/धवल देह के भीतर पालखी मारे जमा है एक जीवन-साधक। उसे पहचानना ही जीवन की सच्चाइयों को भोगना है। वहाँ बिन बादल बरसात होती है, बिन टकराहट बिजली चमकती है। मूक है वहाँ भाषा/भाषण। अनुभव के झरने में आवाज नहीं, मात्र अमृत स्नान होता है।

यह भीतर की प्रस्तावना है। शब्द-शरीर से ऊपर उठी अर्थ की चेतना ही वहाँ सदाबहार बुलाती है। अर्थ शब्द में नहीं, स्वयं के ज्ञान-तन्तुओं के रिश्ते में है। शब्द होठों की वाचालता है, किताबों की मचलती अंगुलियाँ हैं। किताबों को बाँच लेना ही अध्ययन है। स्वाध्याय का ताज उसके सिर पर कहाँ? अध्ययन शब्दों का होता है, अर्थ स्वाध्याय से उभरता है। अधीत शब्दों को स्वयं में खोजना और जीना ही स्वाध्याय की आत्मकथा है। बाँचना और घोखना अध्ययन है। पर स्वाध्याय तो अन्तःशोध का एक स्वाध्याय-शून्य सशक्त माध्यम है। अध्ययन का सारा अभिक्रम फीका है। बिना स्वाध्याय किये संसार से विदाई लेना नपुंसकता की पौरुष को चुनौती है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवन में मुनित्व एवं गार्हस्थ्य दोनों का अंकुरण सम्भव है। मन की कसौटी पर गृहस्थ भी मुनि हो सकता है और मुनि भी गृहस्थ। तन-मन की सत्ता पर आत्म-आधिपत्य प्राप्त करना स्वराज्य की उपलब्धि है। कर्म-शत्रुओं को फँफेड़ने के लिए अहर्निश सन्नद्ध रहना आत्मशास्ता का दायित्व है।

साधक को सदा उसे खोजना चाहिये, जो संसार-सरिता के सतत बहाव के बीच में भी स्थिर है। संसार तो नदी-नाव का संयोग है। अतः निस्संग-साधक के लिए संग उसी का उपादेय है, जिसे मृत्यु न चूम सके। संसार से महाभिनिष्क्रमण/महातिक्रमण करने वाला सिद्धों की ज्योति विकसित कर सकता है।

अभिनिष्क्रमण वैराग्य की अभिव्यक्ति है। वैराग्य राग का विलोम नहीं, अपितु राग से मुक्ति है। वैराग्य-पथ पर कदम वर्धमान होने के बाद संसार का आकर्षण दमित राग का प्रकटन है। यदि संसार के राग-पाषाणों पर वैराग्य की सतत जल-धार गिरती रहे तो कठोर से कठोर चट्टान को भी चकनाचूर किया जा सकता है।

वान्त संसार साधक का अतीत है और अतीत का स्मरण मन का उपद्रव है। अपने अस्तित्व में निवास करना ही आस्तिकता है। साधक ज्यों-ज्यों सूर्य बन तपेगा, त्यों-त्यों मुक्ति की पंखुरियों के द्वार उद्घाटित होते चले जाएँगे। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधना का सत्य वीतराग विज्ञान है। राग संसार से जुड़ना है और विराग उससे टूटना। वीतराग स्वयं की शोध-यात्रा है। अपने आपको पूर्णता देना ही वीतराग का परिणाम है। साधक तो मुक्ति-अभियान का अभियन्ता है। इसीलिए वह ग्रन्थियों से निर्ग्रन्थ है। ग्रन्थि कथरी है, जिसमें चेतना दुबकी बैठी रहती है। ग्रन्थियों को बनाए/बचाए रखना ही परिग्रह है।

मोक्ष महागुहा की यात्रा में परिग्रह एक बोझा है। परिग्रह चाहे बाहर का हो या भीतर का, निर्ग्रन्थ के लिए तो वह 'सूर्य-ग्रहण' जैसा है। इसलिए 'ग्रहण' को प्रभावहीन करने के लिए अपरिग्रह की जीवन्तता अपरिहार्य है। पात्र, वेश, स्थान अथवा बाह्य जगत् को विमोक्ष की दृष्टि से देखने वाला ही आत्म-साक्षात्कार की प्राथमिकता को छू सकता है।

साधक के लिए वस्त्र, पात्र तो क्या, शरीर भी अपने-आप में एक परिग्रह है। मृत्यु तो जन्मसिद्ध अधिकार है। जीवन की सांध्य-वेला में मृत्यु की आहट तो सुनाई देगी ही। मृत्यु किसी प्रकार की छीना-झपटी करे, उससे पहले ही साधक काल-करों में देह-कथरी को खुशी-खुशी सौंप दे। स्वयं को ले जाए सिद्धों की बस्ती में, समाधि की छाँह में, जहाँ महकती हैं जीवन की शाश्वतताएँ। खिसक जाना पड़ता है वहाँ से मृत्यु के तमस् को, अमरत्व के अमृत प्रकाश से पराजित होकर। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कषाय साधना-मार्ग का तीखा रोड़ा है। कषाय की चाण्डाल-चौकड़ी से छूटे बिना स्वयं के व्यक्तित्व धन को खतरे से मुक्त/निश्चिन्त नहीं किया जा सकता। व्यक्तित्व की ऊँचाइयों को जीवन में आत्मसात करने वाला यदि क्रोध का अन्तरजगत में स्वागत करता है, तो वह दूध पीकर भी विष-निर्माण की रसायनशाला में पदासीन है।

कुत्सित, क्रुद्ध एवं कुण्ठित वातावरण से स्वयं को मुक्त करने के लिए उस वातावरण में रहते हुए अपनी अनुपस्थिति मान लेनी चाहिए॥

क्रोध के नियमन के लिए व्यक्ति को चाहिए कि वह अपेक्षाएँ दूसरों की बजाय स्वयं से रखे।

हमें किसी के कटु शब्द सुनने और सहने की क्षमता रखनी चाहिए। सहिष्णुता के अभाव में मानसिक उद्वेग और अशान्ति में बढ़ोतरी होती है। क्रोधभरा चेहरा और होठों पर अपशब्द सभ्य व्यक्ति के लिए कलंक है। मुस्कराहट जहाँ दूसरे व्यक्ति को आकर्षित करती है, वहीं स्वास्थ्यकर भी है। मधुर वाणी का प्रयोग हमारी ओर से दूसरे को दिया जाने वाला एक सम्माननीय उपहार है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'शीत' अनुकूलता का परिचय-पत्र है, तो 'उष्ण' प्रतिकूलता का। अनुकूल और प्रतिकूल में साम्य-भाव रखना समत्वयोग है। शुक्ल और कृष्ण दोनों पक्षों में सूर्य की भाँति समरोशनी प्रसारित करने वाला ही महापथ का पथिक है।

साधक संसार में प्रिय और अप्रिय की विभाजन-रेखाएँ नहीं खींचता। दो आयामों के मध्य, बायें और दायें तट के बीच प्रवहणशील होना सरित्-जल का सन्तुलन है। दो में से एक का चयन करना सन्तुलितता का अतिक्रमण है। चयनवृत्ति मन की माँ है। समत्व चयन-रहित समदर्शिता है। चुनावरहित सजगता में मन का निर्माण नहीं होता। चयन-दृष्टि ही मन की निर्मात्री है। साधना का प्रथम चरण मन के चांचल्य को समझना है। मनोवृत्तियों को पहचानना और मन की गाँठों को खोजना आत्म-दर्शन की पूर्व भूमिका है। मन तो रोग है। रोग को समझना और उसका निदान पाना स्वास्थ्य-लाभ का सफल चरण है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संसार में हमारा कोई न तो मित्र है और न ही शत्रु। यहाँ सब स्वअस्तित्व के स्वामी हैं। जैसे आप एक हैं और अकेले हैं, वैसे ही सभी अकेले हैं। यहाँ सभी अजनबी हैं, अनजाने हैं। दुनिया दो-चार दिन का मेला है। मेले में जा रहे थे, किसी के हाथ में हाथ डाल दिया और दोस्ती कर ली। उसीसे कभी अनबनी हो गई तो दुश्मनी हो गई। दोस्त भी हमने ही बनाया, तो दुश्मन भी हमने ही बनाया। यों मैं ही दोस्त बन गया और मैं ही दुश्मन।

मैत्री राग है और दुश्मनी द्वेष है। सत्य तो यह है कि द्वेष की जननी मैत्री ही है। बिना किसी को मित्र बनाए शत्रु बनाना असम्भव है। जिसे आप आज शत्रु कह रहे हैं, निश्चित रूप से वह कभी आपका मित्र रहा होगा। इसलिए जो लोग द्वेष के कांटे हटाना चाहते हैं, उन्हें राग के बीज हटाने जरूरी हैं। राग से उपरत होना निर्विकल्प भाव-दशा प्राप्त करने की सही पहल है।

अकेला आया हूँ, अकेला जाऊँगा—यह बोध ही पर्याप्त नहीं है। मैं अकेला हूँ—यह बोध रखना जीवन में वीतरागता को न्यौता है। 'मैं केवल एक ही हूँ'—इसका ध्यान और ज्ञान ही अपने आप में 'कैवल्य' है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मोक्ष जीवन की आखिरी मंजिल है। जीवन के हर कदम पर मृत्यु की पदचाप सुनना लक्ष्य के प्रति होने वाली सुस्ती को जड़ से उखाड़ फेंकना है। साधक को आत्म-सदन की रखवाली के लिए जगी आँख चौकन्ना रहना चाहिये। अन्तर्गृह को सजाने-सँवारने के लिए किया जाने वाला श्रम अपने मोक्षनिष्ठ-व्यक्तित्व को अमृत स्नान कराना है। जीवन की विदाई से पहले अन्तर्यात्रा में अपनी निखिलता को एकटक लगाए रखना स्वयं के प्रति वफादारी है।

अनासक्ति साधना-जगत की सर्वोच्च चोटी है और इसे पाने के लिए मृत्यु की प्रतीति अनिवार्य है।

जीवन, जन्म एवं मृत्यु के बीच का एक स्वप्नमयी विस्तार है। स्वप्न-मुक्ति का आन्दोलन ही संन्यास है। संन्यास जीवन-मुक्ति का मोह एवं मूर्च्छा की मृत्यु ही दीक्षा की अभिव्यक्ति है।

प्रत्येक मानव मृत्यु की कतार में आगे-पीछे खड़ा है। अपनी मृत्यु के क्रम को हर क्षण स्मरण करना जीवन का संयस्त अनुष्ठान है। अनासक्ति का ह्रास ही संन्यास का विकास है। भौतिक कर्तव्यों का पालन करते हुए संसार में अनासक्त जीवन जीना अध्यात्म यात्रा है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक्त्व सत्य की न्याय-तुला है। जीवन की मौलिकताओं और नैतिक प्रतिमानों को उज्ज्वलतर बनाने के लिए यह अप्रतिम सहायक है। सचमुच, जिसके हाथ सम्यक्त्व-प्रदीप से शून्य हैं, वह मानो चलता-फिरता 'शव' है, अँधियारी रात में दिग्भ्रान्त-पान्थ है। साधक के कदम बढ़ें जिन-मार्ग पर, अन्धकार से प्रकाश की ओर। मुक्त हो जीवन की उज्ज्वलता, मिथ्यात्व की अँधेरी मुट्ठी से।

हम अपने सच्चे स्वरूप को भूलने से ही बन्धन में पड़े हुए हैं और यही भूल हमारी परतन्त्रता का आधार है।

असत्य से प्यार करना व्यक्ति का भोलापन है। सत्य प्रतीति का दीया जल जाने पर मिथ्यात्व के अंधकार को विदा होना पड़ता है।

कथनी और करनी की एकरूपता ही अध्यात्म की अभिव्यक्ति है। बोधपूर्वक किया गया आचरण किसी का अनुकरण नहीं वरन् सत्य का समर्थन है।

बातों के बादशाह तो बहुत होते हैं, लेकिन आचरण के महावीर बहुत कम। कथनी की यमुना और करनी की गंगा का संगम ही जीवन का तीर्थ-राज प्रयाग है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अध्यात्म कर्म-क्षरण का अभियान है। जीवन की उत्पत्ति से लेकर महामुनित्व की प्रतिष्ठा का सारा वृतान्त इसमें आकलित है। चेतना की जागरूकता ही आरोग्य-लाभ है। कार्मिक परिवेश के साथ चेतना की साझेदारी मैत्री विपर्यास है। आत्मा एकाकी है, अतः और तो क्या कर्म भी उसके लिए पड़ोसी है, घरेलू नहीं। परकीय पदार्थों से स्वयं को अतिरिक्त देखने का नाम ही भेद-विज्ञान है।

भेद-विज्ञान एक प्रकार से समीक्षा-ध्यान है। यह भीतरी समझ है, विवेक का परिवेश है। यही तो वह सहारा है, जिससे चींटी रेगिस्तान की रेती में पड़े चीनी के दाने को जुटा कर अपने घर में ले आती है। माटी-सोना/नीर-क्षीर/जड़-चेतन के बीच विभाजन-रेखा खींचने वाली प्रज्ञा-डण्डी को हाथ में थामना अध्यात्म के जादूई डण्डे की उपलब्धि है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शरीर को स्त्री/पुरुष से अछूता रखना ही ब्रह्मचर्य नहीं है। ब्रह्मचर्य तो ब्रह्म में चर्या है, खुद में खुद का चलना है। स्त्री/पुरुष की प्रेम-पागल स्थिति में भी स्वयं की भाव भंगिमाओं को स्फटिक-सा निर्मल फाख्ता रख लेना ब्रह्मचर्य की संजीवित अनुमोदना है।

चित्त के धरातल पर चेतना जब तक स्त्री-पुरुष के बीच विभाजन-रेखा खींचती रहेगी, साम्यभाव को ठोकरें मारती रहेगी, तब तक ब्रह्मचर्य महज खजुरिया अहंकार बनेगा, भीतर की सहज फलदायी सरसता नहीं। आवश्यक है, लम्बे समय तक उसकी चमक-दमक कायम रखने के लिए भीतर से सहज/सम्यक् होना।

ब्रह्मचर्य वह घास है, जिसे भीतर की माटी आपोआप अस्तित्व देती है। वह आरोपण नहीं है। आरोपण तनाव की जहरीली जड़ है। जो जीवन में बांसुरी की माधुरी बनकर प्रवेश करे, वही चर्या ब्रह्मचर्य है। हर किसी के साथ भाई-बहिन के नाते की उज्ज्वलता का धागा बाँधना ब्रह्मचर्य को वातावरण के साथ जिन्दा रखना है।

पुरुष और स्त्री दोनों में जीवन की समज्योति फैली है। दोनों का वर्ग-भेद करने वाली नजरें देह के मापदण्डों का मूल्यांकन करती हैं, देह के पार बस रहे पारदर्शी का नहीं। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विचार की भूमिका पर सही, संयमित भाषण देना ध्यान है। आचरण ध्यान का माँ-जाया भाई है। ध्यान में सधे विचारों के अनुकूल जीवन की रचना आचरण है। इसलिए आचरण अन्तर्जीवन की अभिव्यक्ति है। आचरण की उज्ज्वलता अन्तर्बोध की पवित्रता पर निर्भर करती है। विद्वत्ता जीवन का यथार्थ नहीं, अपितु आभूषण है। जीवन-सौन्दर्य की सच्ची आभा तो भीतर से आती है। जो आचरण बोध की तुकबन्दी से अपनी व्यवस्था सही बैठा लेता है, वही आत्मबोध है। ज्ञान-विज्ञान के अनुभवों का निचोड़ है। ज्ञान का जन्म ध्यान के गर्भ में होता है। आचरण ज्ञान की ही परछाई है। आत्मबोध की उपलब्धि तो देहातीत और मन से परे की स्थिति है। पुरुष का लगाव मन के साथ तथा स्त्री का लगाव शरीर के साथ अधिक होता है। लगाव को विसर्जित करके ही शरीर पर मन से ऊपर उठा जा सकता है। अलगाव की दशा ही आत्मबोध है। अपने मन की प्रतिपल होने वाली स्खलितता का ज्ञान करने के बाद ही ध्यान में प्रवेश पाया जा सकता है। मन को जबर्दस्ती एकाग्र नहीं किया जा सकता। इसके लिए मन के वास्तविक व्यक्तित्व को पहचानना अनिवार्य है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मन का बिखराव बाहरी जगत के सौजन्य से होता है। इस बिखराव में चेतना दोहरा संघर्ष करती है। पहला संघर्ष चेतना के आदर्श और वासना-मूलक पक्षों में होता है तथा दूसरा उस परिवेश के साथ होता है, जिसमें मनुष्य अपनी इच्छा/वासना की पूर्ति चाहता है। यह संघर्ष ही आत्म-ऊर्जा को विच्छिन्न और कुण्ठित करता है।

मनुष्य अनेक चित्तवान है। इसलिए वह अनगिनत चित्तवृत्तियों का समुदाय है। इच्छा चित्तवृत्ति की ही सहेली है। इच्छाओं का भिक्षापात्र दुष्पूर है। इच्छापूर्ति के लिए की जाने वाली श्रम-साधना चलनी में जल भरने जैसी विचारणा है। चित्त के नाटक का पटाक्षेप चैतन्य की रोशनी का विमोचन है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य का मन सदा संसरणशील रहता है। अतः मन की मृत्यु का नाम ही मुनित्व की पहचान है। मन प्रचण्ड ऊर्जा का स्वामी है। यदि इसके व्यक्तित्व का सम्यग्बोध कर इसे सृजनात्मक कार्यों में लगा दिया जाए, तो वह आत्मदर्शन/परमात्म-साक्षात्कार में अनन्य सहायक हो सकता है। इसे प्रशस्त जीवन की स्वतिप्रद छाया बनाना स्वयं के सिद्धत्व और सम्यक्त्व का मन को दो घूँट रस पिलाना है।

सत्य की मुखरता आत्मा की पवित्रता से है। मन के मौन हो जाने पर ही निःशब्द सत्य निर्विकल्प समाधि झंकृत होती है। अतः बाह्याभ्यन्तर की स्वच्छता वास्तव में कैवल्य का आलिंगन है। स्वयं को जगाकर महामुनित्व का महोत्सव आयोजित करना स्वयं में सिद्धत्व की प्राण-प्रतिष्ठा है।

मन से स्वयं के तादात्म्य का छूटना ही ध्यान है। मन की मृत्यु का नाम ही जीवन में मौन एवं समाधि का आयोजन है।

मन वह चौराहा है जिस पर विचारों के वाहन गुजरते रहते हैं। यदि मनुष्य स्वयं को यातायात-नियन्त्रक के रूप में स्वीकार कर ले तो विचारों के साथ उसका तादात्म्य और अहं-भाव तो समाप्त होगा ही साथ ही विचारों को सही दिशा दर्शन भी होगा।

मन की एकाग्रता के लिए जागरूकता और रसमयता अनिवार्य है। मन की रसमयता का सहज परिणाम ही एकाग्रता है। जीवन का अन्तर्निहित मूल्य रस-मुग्धता में है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधना का प्रथम चरण मन के चांचल्य को समझना है। मनोवृत्तियों को पहचानना और मन की गाँठों को खोजना आत्म-दर्शन की पूर्व भूमिका है।

मनोवृत्तियों का पठन-अध्ययन अप्रमत्त चेता-पुरुष ही कर सकता है। एक ज्ञान में अनेक का ज्ञान सम्भावित है। एक मनोवृत्ति को समग्रभाव से पढ़ने वाला वृत्तियों के सम्पूर्ण व्याकरण का अध्येता है। मन का द्रष्टा अपने अस्तित्व का पहरेदार है। द्रष्टाभाव/साक्षीभाव मन के कर्दम से उपरत होकर आत्म-गगन में प्रस्फुटित होने का प्रथम आयाम है।

मनोदीप की निष्कम्पता ही समत्वदर्शन है। 'मैं' वर्तमान हूँ। अतीत और भविष्य में मेरा कम्पन सार्थक नहीं है। वर्तमान का अनुपश्यी ही मन की संशरणशील वृत्तियों का अनुप्रेक्षण कर सकता है। प्राप्त क्षण की प्रेक्षा करने वाला ही दीक्षित है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मन एक महान कार्यकर्त्ता है। मन को मारने की अपेक्षा उसे एक सृजनात्मक शक्ति के रूप में देखा जाना चाहिये। उसे मारकर दमन करने की बजाय मित्र का-सा व्यवहार करने से वह मित्रवत् ही कार्य करेगा।

स्वस्थ मन के मंच पर ही अध्यात्म के आसन की बिछावट होती है। आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए मन की निरोगिता आवश्यक है और मन की निरोगिता के लिए कषायों का उपवास उपादेय है। विषयों से स्वयं की निवृत्ति ही उपवास का सूत्रपात है। क्षमा, नम्रता और संतोष के द्वारा मन को स्वास्थ्य-लाभ प्रदान किया जा सकता है।

समाधि स्वास्थ्य का विपक्ष नहीं है। यह शरीर को एकत्रित ऊर्जा देकर स्वास्थ्य-लाभ की दिशा में सहायिका बनती है। सांसों पर संयम करना, चित्त के बिखराव को रोकना और इन्द्रियों की अनर्गलता पर एड़ी देना—यही तो समाधि के खास हेतु हैं और आयु-वर्धन तथा जीवन-पोषण के लिए भी यही मजबूत सहारे हैं। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधना के लिए चाहिए ऊर्जा। ऊर्जा सामर्थ्य की ही सुखछवि है। शरीर या इन्द्रियों की ऊर्जा जर्जरता की ओर यात्राशील है। इसे नव्य-भाव अर्थवत्ता के साथ नियोजित एवं प्रयुक्त कर लेने में इसकी महत् उपादेयता है दीपक बुझने से पहले उसकी ज्योति का उपयोग करना ही प्रज्ञा-कौशल है। मृत्यु के बाद कैसे करेंगे मृत्युंजयता !

साधक आन्तरिक शत्रुओं को परास्त कर विजय का स्वर्ण पदक प्राप्त करता है। यह आत्म-विजय सत्यतः लोक-विजय है। सच्ची वीरता अन्य को नहीं अनन्य अपने आपको जीतने में हैं। देहगत और आत्मगत शत्रुओं पर विजयश्री प्राप्त करने वाला ही जिन है, आत्म-शास्ता है, लोक-विजेता है। इस मंच पर डग भरने के बाद किसी और को पाना और जीतना अवशेष नहीं रहता। धान पकने के बाद बारिस की चाह कहाँ से रहेगी। उसकी सारी कामनाएँ तो निष्काम/निश्चिन्त आश्वस्त चित्त में सुप्त/अचेतन हो जाती है। उसकी गगन-चूमी ऊर्जा बुद्धि-बोध से देवार्चित होकर मात्र करती है महापग का प्रवर्तन, सद्विचार की महावीथि पर सदाचार का सुमन-सर्जन। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधक सत्य-पथ का पथिक होता है। सत्य के साथ संघर्ष बिना अनुमति के हमसफर हो जाता है। साधक विराट् संकल्प का धनी होता है। उसे संघर्ष/परीषह से घबराना नहीं चाहिये, अपितु सहिष्णुता के बल पर उसे निष्फल और अपंग कर देना चाहिये। भगवान् ने कहा है कि परीषहों विघ्नों को न सहना कायरता है। परीषह-पराजय संकल्प-शैथिल्य की अभिव्यक्ति है। साध्य के बीज को अंकुरित करने के लिए अनुकूलता का जल ही आवश्यक नहीं है, अपितु परीषहमूलक प्रतिकूलता की धूप भी अपरिहार्य है। दोनों के सहयोग से ही बीज का वृक्ष प्रकट होता है।

साधक सहनशील होता है, अतः वह निर्विवादतः समत्वयोगी भी होता है समत्व की गोद में ही धर्म का शैशव है। साधनागत अनुकूलताएँ बनाए रखने के लिए धर्मसंघ का अनुशासन भी उपादेय है।

साधना के इन विभिन्न आयामों से गुजरना अनामय लक्ष्य को साधना है। आत्म-विजय ही परम लक्ष्य है। भगवान् ने इसे त्रैलोक्य की सर्वोच्च विजय माना है। शरीर, मन और इन्द्रियों को निगृहीत करने से ही यह विजय साकार होती है। फिर वह स्वयं ही सर्वोपरि सम्राट होता है। मुक्त हो जाता है हर सम्भावित दासता से। इस विमल स्थिति का नाम ही मोक्ष है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधक अहर्निश साधना के लिए ही कटिबद्ध होता है। उसके लिए समग्रता से बल-पराक्रम का प्रयोग करना साधक की पहचान है। अतः साधक को विराम और विश्राम कैसे शोभा देगा? प्रस्थान-केन्द्र से प्रस्थित होने के बाद उसका सम्मोहन और आकर्षण विसर्जित करना अनिवार्य है।

वान्त का आकर्षण पराजय का उत्सव है। पूर्व सम्बन्धों का स्मरण कर उनके लिए मुँह से लार टपकाना साधनात्मक धर्म की सीमा का अतिक्रमण है। यह तो त्यक्त प्रमत्तता एवं इन्द्रिय-विलासिता का पुनः अङ्गीकरण है। ममत्व से मुक्त होना ही मुनित्व की प्रतिष्ठा है। लालसा का प्रत्याशी तो पुनः संसार का ही आह्वान कर रहा है। स्वयं के धैर्य पर टिके रहना अनिवार्य है। साधक को चाहिये कि वह तृण-खण्ड की भाँति कामना के प्रवाह में प्रवाहित होने से स्वयं को बचाये। साधक उद्बुद्ध रहे शाश्वत के लिए। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विश्व मानव-मन के द्वन्द्वों एवं आत्म स्वीकृतियों का दर्पण है। साधक आत्मपूर्णता के लिए समर्पित जीवन का एक नाम है। सम्भव है मन की हार और जीत के बीच वह झूल जाये। साधना के राजमार्ग पर बढ़े पाँव शिथिल या स्खलित न हो जाय, इसके लिए हर पहर सचेत रहना साधक का धर्म है।

सर्वदर्शी साधक हर संभावना पर पैनी दृष्टि रखता। कर्तव्य-पथ पर चलने का संकल्प करने के बाद पाँवों का मोच खाना संकल्पों का शैथिल्य है। साधक को चाहिये कि वह आठों याम अप्रमत्तता, आत्म-समानता, अनासक्ति, तटस्थता और निष्कामवृत्ति का पंचामृत पिये-पिलाये। इसी से प्राप्त होता है कैवल्य-लाभ, सिद्धालय का उत्तराधिकार।

अध्यात्म अन्तरङ्ग एवं बहिरङ्ग का स्वाध्याय। असंयम से निवृत्ति और संयम में प्रवृत्ति—यही उसके वर्ण शरीर की अर्थ-चेतना है। निजानन्द-रसलीनता ही साधक का सच्चा व्यक्तित्व है। इस आत्मरमणता का ही दूसरा नाम ब्रह्मचर्य है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधक का धर्म है—चारित्रगत बारीकियों के प्रति प्रतिपग/प्रतिपल जगना। प्रमाद एवं विलासिता की चपेट में आ जाना साधना-पथ में होने वाली दुर्घटना है। वह अप्रमत्त नहीं, घायल है।

साधक महापथ का पांथ है। अप्रमाद उसका न्यास है। मौन मन ही उसके मुनित्व की प्रतिष्ठा है। स्वयं से मिलने का संकल्प ही वाणी के धरातल पर मौन का महोत्सव है। अप्रमत्तता, अनासक्ति, निष्कषायता, समदर्शिता एवं स्वावलम्बिता के अंगरक्षक साथ हों, तो साधक को कैसा खतरा। आत्म-जागरण का दीप आठों याम ज्योतिर्मान रहे, तो चेतना के गहराव में कहाँ होगा अन्धकार और कहाँ होगा भटकाव! □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिष्य सत् के प्रति कुतूहल भरी उड़ान है। राह से अनजान होने के कारण उसका एक पाँव तो लकवे की हवा मारा है। बिन सद्गुरु शिष्य की यात्रा मंजिल की काई-जमी सीढ़ियों को एक पाँव से पार करना! । सद्गुरु अगर बैसाखी बनकर शिष्य को मजबूत सहारा दे दे, तो एक पाँव से भी आगे बढ़ना दिक्कत-तलब कहाँ !

शिष्य एक भूमिका है। उसमें कमियाँ और कमजोरियाँ भी मुमकिन हैं। वे जादू-मंतर की तरह गायब होने वाली नहीं हैं। सद्गुरु को ही उनका सफाया करना पड़ता है और उसे ही अन्तरनिहित असलियत से सीधा परिचय कराना पड़ता है। सद्गुरु के चरणों में स्वयं को न्यौछावर करने के बाद शिष्य सद्गुरु से आजाद अंग नहीं है।

सद्गुरु की मौजूदगी ही शिष्य के लिए अन्तर बोध का पैगाम है। उसकी उपस्थिति में भी शिष्य का चिराग न जले, तो सद्गुरु उत्तर नहीं, शिष्य के मुँह के सामने खड़ा प्रश्न-चिह्न है। सत् से साक्षात्कार करवाकर शिष्य को गुरु बनाना ही सद्गुरु की जिम्मेदारी है। सद्गुरु के पास रहकर शिष्य भी सद्गुरु बन जाये, तो इसमें अचरज किस बात का। समय की सीढ़ी पाकर सेवक भी एक दिन सेठ बन सकता है।

सद्गुरु समाधि का संवाहक है। वहाँ भटकाव नहीं, मात्र समाधान होते हैं। जहाँ सारी समस्याओं का समाधान होता है, वही समाधि है। (शेष तो जीवन के नाम पर मुर्दों की बस्ती है) □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अमरत्व मृत्यु-मुक्ति का अभियान है। जागकर जीने वाला ही इस अमृत-पथ का राही हो सकता है। जागना ही साध्य को साधना है। जागना और साधना एक ही घटना का परिचय देने वाले दो नाम हैं।

जाग से हटना नींद की जहर-चाटी कुण्डलिनी को उकसाना है। मृत्यु की हल्की-फुल्की मुस्कान ही नींद है। मृत्यु जीवन की ड्योढ़ी को हठात् नहीं खटखटाती। वह हर रात नींद बनकर आती है और हर सुबह पुनर्जन्म दे जाती है।

नींद दिन भर की थकावट के बाद लिया जाने वाला विश्राम है और मृत्यु जीवन-भर की थकावट के बाद। नींद मृत्यु की कांख में दबा मुखौटा है। यह दीप का निर्वाण अवश्य है, मगर समाधि नहीं। समाधि तो जागती हुई नींद हैं। नींद में आदमी शून्य हो जाता है, किन्तु जागती-नींद में स्वयं के अस्तित्व की अनुभूति स्थायी रहती है। नींद व्याधि है, किन्तु जागृति समाधि है।

इसीकी हथेली पर रंग लाती है अमराई की मेहंदी। ध्यान में होने वाली आत्मजागरूकता उच्च पदासीन समाधि के द्वार पर ऊषा-किरण की दस्तक है। रीढ़ को बाँकी किये बिना बैठना, कमर को सीधी रखना प्रमत्तता को भीतर आने से रोकने वाला सजग पहरा है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आत्मा जीवन का शब्दान्तर है। यह न तो परमात्मा के तारे का टुकड़ा है, न ही इसमें परमात्मा छिपा है। आत्मा स्वयं परमात्मा है। प्रकाश का अस्तित्व ज्योति से जुदा कहाँ होता है! ज्योति तो स्वयं प्रकाश रूप ही है। आत्मा की पूर्णता/परमता का नाम ही परमात्मा है।

मनुष्य की आध्यात्मिक आभा ही परमात्मा की अभिव्यक्ति है। आत्मा जीवन की बुनियाद है और परमात्मा आत्मा का उज्ज्वल रूप है।

प्रत्येक जीवन/आत्मा मौलिक होती है। चूंकि वह पारम्परिक नहीं होती, इसलिए मनुष्य को भी पारम्परिक नहीं, अपितु मौलिक बनना चाहिये। जीवन सत्यों की खोज करना उसके लिए प्राथमिक हो और श्रद्धा आनुषंगिक। सत्य परम्परा का पालन नहीं, वरन् जीवन में घटित होने वाली मौलिकताओं का संगीन अवलोकन है।

तर्क एवं बौद्धिकवाद के कारण मनुष्य का दार्शनिक बनना कठिन नहीं है, किन्तु सत्य का दर्शन आत्म-द्रष्टा को ही सम्भव है। दार्शनिक मात्र ज्ञात तत्त्व पर ही लिखा-पढ़ी कर सकता है। जबकि आत्म-द्रष्टा अज्ञात लोक का भी साक्षात्कार कर सकता है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पौ जन्म है, प्रभात बचपन है, दोपहर जवानी है, सन्ध्या बुढ़ापा है। रात मृत्यु है। जीवन एक बिना रुकी यात्रा है। पूर्व में उगा सूरज पश्चिम की ओर कदम-पर-कदम बढ़ाता है। हर कोई जीवन में कुछ-न-कुछ कमाता है, पैदा करता है। बाँझ अभागा माना जाता है। बाहर का कमाया-जमाया यहीं धरा रह जाता है। अपने भीतरी जीवन में बिना कुछ पैदा किये बिना चले जाना स्वयं का बाँझपन नहीं तो और क्या है?

रात जीवन-कहानी का विराम है। सन्ध्या आ रही है। काल उपहास करे, उससे पहले सन्ध्या को सार्थक कर लेना सफेद बाल वालों की अनुभव-प्रौढ़ता है। जिंदगी बहुत बीत चुकी है। शेष बची थोड़ी जिन्दगी के लिए भी आँख खुल जाये, तो लाखों पाये। यह जरूरी नहीं है कि जो काम पूरी जिन्दगी में नहीं होता, वह थोड़े समय में नहीं हो सकता। विद्यार्थी साल भर मेहनत कहाँ करता है! परीक्षा की घड़ी ज्यों-ज्यों करीब आती है, मान-सिकता उसके मुताबिक तैयार होती चली जाती है। परीक्षा के दिनों में समय कम, पर लगन अधिक होती है। यह लगन ही सफलता की बुनियाद है।

व्यक्ति को अपने समय की दूसरे सभी कामों से थोड़ी-थोड़ी कटौती करनी चाहिये और घड़ी-दो-घड़ी का समय ध्यान में लगाना चाहिये। अन्तरशक्तियों के निर्माण एवं जागरण के लिए रात को सोते समय और सुबह उठते समय ध्यान में स्वयं को सक्रिय अवश्य कर लेना चाहिये। घड़ी भर किये गये ध्यान का प्रभाव चौबीस घड़ियों तक तरंगित रहता है। दवा की एक गोली भी दिन भर स्वास्थ्य की लहरें फैला सकती है। जिसे एक बार ध्यान का रंग चढ़ गया, वह उतरना सहज नहीं है। दूध पीने के बाद भला समुन्दर के पानी को पीने की चाह कौन करेगा! □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्वासोच्छ्वास—जीवन की अबाध यात्रा है। साँस मुसाफिर है नाक से फेफड़ों की यात्रा का। साँस लेने और छोड़ने के बीच एक अवकाश का अस्तित्व है। यह निरा कोरा नहीं है, अपितु जीवन को नाक की डंडी पर रखकर चिन्तन की आँखों के कोइयों से झांकने का तरीका है। उस अवकाश की बढ़ोतरी अन्तरंग में जीवन-शक्ति और जीवन-शान्ति की पदोन्नति है।

साँस का छोड़ना अहंकार को देश निकाला है। साँस का लेना घर के आँगन में विराट की अगवानी है। निष्कासन और पदार्पण दोनों की सन्धि में चेतना की, झरोखे से झाँकती माधुरी है। यह अन्तर ऋचाओं के चरम संगान में मौन की अन्तहीन अमराई है। योग में साँसों का एक सम्भावित समय के लिए मौन रखना ब्रह्मनाद की पदचाप सुनने की पहल है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चित्त एक नहीं, अपितु अनेकता का जमघट है। यह एक समूह है, परमाणुओं का भरा-पूरा समाज है जितने दृश्य, उतने चित्त। जिस-जिस वस्तु को हम मजबूती से ग्रहण करेंगे हमारा चित्त उन सभी से जुड़कर बँटता बिखरता चला जाएगा। बँटते/बिखरते चित्त को वापस संकलित करना ही ध्यान है। जिन-जिनसे सम्बन्ध जुड़ा है उन-उनसे चित्त को हटाकर स्वयं में समाविष्ट करने की प्रक्रिया ही ध्यान है। दिन भर अपनी किरणों को आकाश में फैलाने वाले सूरज द्वारा सांझ ढलते ही अपने में समेटना ध्यान के तहत बाहर से भीतर आने की शैली है। यह सिकुड़ता नहीं है वरन् अपने अन्तर-जीवन को अनुशासनबद्ध करना है। जो लोग इसमें ईमानदारी रखते हैं वे अपनी चित्त की ऊर्जा का आन्तरिक खेत-खलिहान में उपयोग कर लेते हैं। यह ध्यान वास्तव में विश्व को एक किनारे रखकर स्वयं का मूल्यांकन करना है।

दिन संसार है/रात उससे आँख मुँदना है। दिन में अपनी वृत्ति फैलाओ, ताकि जीवन की गतिविधियाँ ठप्प न हो जाए और सांझ पड़ते-पड़ते सूर्य-किरणों की तरह उनका संवरण कर लो। यही चित्त का फैलाव और संकोच है। यदि रात को स्वप्न-मुक्त निद्रा भी ली, तो भी वह चित्त की एकाग्रता ही है। ध्यान का काम स्वप्न-मुक्त/निर्विकल्प चित्त का प्रबन्ध है। जब किसी आसन पर बैठे बिना ही, बिना किये ध्यान हो जाय, तो ही वह जीवन का इंकलाब है। जब ध्यान अभ्यास और सिद्धान्त से ऊपर जीवन का अभिन्न अंग बन जाये, तभी वह अन्तरमन में परमात्मा के अधिष्ठान का निमित्त बनता है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान के लिए शरीर का स्वस्थ रहना अपरिहार्य है। आसन इसीलिए किये जाते हैं। आसन का सम्बन्ध ध्यान से नहीं, अपितु शरीर से है। आसन एक तरह के व्यायाम के लिए हैं। भूख लगे, जीमा हुआ पचे, शरीर शुद्धि हो, यही आसन की अन्तरकथा है। ध्यान शरीर-शुद्धि नहीं बल्कि चित्त शुद्धि है। ध्यान के लिए तो वही आसन सर्वोपरि है, जिस पर हम दो-तीन घंटे जमकर बैठ सकें।

आसन शरीर का एकान्त कर्मयोग है। यह शरीर को श्रम का अभ्यासी बनाये रखने का दत्तचित्त उपक्रम है! जो तन्मयतापूर्वक काम करता है, वह कई तरह के आसनों को साध लेता है। अध्यात्म का अर्थ यह नहीं होता है कि सब काम छोड़-छाड़ दो। काम से जी चुराना अध्यात्म नहीं है, अपितु काम को तन्मयता एवं जागरूकतापूर्वक करना अध्यात्म की जीवन्त अनुमोदना है। निष्क्रियता अध्यात्म की परिचय-पुस्तिका बनी भी कब! अध्यात्म का प्रवेश-द्वार तो अप्रमत्तता है। प्रमाद छोड़कर दिलोजान से काम करते रहना इस कर्मभूमि का महान् उद्योग है।

उद्योग अर्थात् उद् + योग > ऊँचा योग। उद्योग की बुनियाद श्रम है और श्रम करना ऊँचा योग है। अगर श्रम ठीक है, तो उद्योग करना कहाँ पाप है! यह तो जीवन की साधना का एक जरूरतमन्द पहलू है। अपनी मेहनत की रोटी खाना अपने पौरुष का पसीना निकालना नहीं है, वरन् पसीने के नाम पर उसका उपयोग करते हुए, उसे जंग से दूर रखना है।

अपने हाथों से तन्मयतापूर्वक श्रम करना पापों से मुक्ति पाने का आसान तरीका है। दूसरों द्वारा कोई काम करने की बजाय स्वयं करना अधिक श्रेयस्कर है। खाते-पीते, उठते-बैठते, सोते-जागते हर समय होश रखना स्वयं को गृहस्थ-सन्त के आसन पर जमाना है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वयं की एकरसता ही समाधि है। रसमयता का ही दूसरा नाम एकाग्रता है। मन की चंचलता रसमयता का अभाव है। जैसे पके हुए बाल एक लम्बे जीवन की दास्तान है, वैसे ही रस की परिपक्वता ध्यान की मंजी हुई कहानी है।

व्यक्ति का ध्यान के बिना कोई अस्तित्व नहीं है। ध्यान एक व्यभिचारी का भी हो सकता है। वासना और वासना से सम्बन्धित बिन्दुओं पर वह एकाग्रचित्त रहता है। पर यह ध्यान अशुभ है। वह इसलिए, क्योंकि यह ध्यान उत्तेजना, विक्षोभ एवं आक्रोश को जन्म देता है। वह हिमालय का शिखर नहीं, अपितु सड़क का सांड है।

जो स्वयं को स्वयं की नजरों में आत्म-तृप्त और आह्लाद-पूर्ण कर दे, वही ध्यान शुभ है। यह बाहरी संघर्ष से पलायन नहीं है। ध्यान शक्ति भी देता है और शान्ति भी। शक्ति पुरुषार्थ को प्रोत्साहन है और शान्ति उसकी मंजिल। सुबह के समय किया जाने वाला ध्यान शक्ति के द्वार पर दस्तक है और सन्ध्या समय किया जाने वाला ध्यान शान्ति की ड्योढ़ी पर। सुबह तो रात भर सोयी-लेटी ऊर्जा का जागरण है। जबकि सन्ध्या दिन भर मेहनत-मजदूरी कर थकी-माँदी चेतना की पहचान है। सुबह अर्थात् सम्यक् बहाव और संध्या अर्थात् सम्यक् ध्यान। सुबह/शक्ति कुण्डलनी से चेतना के ऊर्ध्वारोहण की यात्रा की शुरुआत है। सन्ध्या/शान्ति उस यात्रा-यज्ञ की पूर्णाहुति है। शक्ति-जागरण के लिए पद्मासन, सिद्धासन, प्राणायाम भी सहायक-सलाहकार हैं और शान्ति-अभ्युदय के लिए शवासन, सुखासन सी साझेदार हैं। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मन सक्रिय है। ध्यान मन की सक्रियता को हड़पता नहीं है। उसे निष्क्रिय करके शव नहीं बनाता, बल्कि चेतना के विभिन्न आयामों पर उसे विकसित करता चलता है। जिस मन के कमल की पंखुड़ियाँ अभी कीचड़ से कुछ-कुछ छू रही हैं, ध्यान उन्हें कीचड़ से निर्लिप्त करता है। सूरज की तरह उगकर उसे अपने सहज स्वरूप में खिला देता है। यानी उसे वास्तविकता का सौरभ दे देता है। यह प्रक्रिया निष्क्रियता और जड़ता प्रदान करने की नहीं है। यह तो विकासशीलता का परिचय देती है।

नाभि में कुण्डलिनि सोयी है। उसे जाग्रत कर ध्यान चक्रों का भेदन करवाता है। जब व्यक्ति ध्यान के द्वारा चक्रों का भेदन करता है, तो वह नीचे से ऊपर की यात्रा करता है। यह ऊर्ध्वारोहण है, एवरेस्ट की चढ़ाई है। षड्चक्रों का भेदन वास्तव में षड्लेश्याओं का भेदन है। इन चक्रों के पार है वीतरागता, जहाँ साधक को सुनाई देता है ब्रह्मनाद, कैवल्य का मधुरिम संगीत।

ध्यान वस्तुतः आत्म-शक्ति की बैटरी को चार्ज करने का राजमार्ग है। अब यह हम पर निर्भर है कि हम उस बैटरी को कब चालू करें, कब उसका उपयोग करें और उसकी शक्तियों का लाभ लें। आज न केवल बाहरी खतरे बढ़े हैं, वरन् भीतरी खतरे भी बहुत बढ़-चढ़ गये हैं। सच्चाई तो यह है कि बाहर से भी ज्यादा भीतरी खतरे बढ़े हैं। इसलिए आज समस्याओं की पहेलियों को सुलझाने के लिए ध्यान अचूक है। हमें अधिक समय न मिले, तो दर-रोज सुबह चौबीस मिनट ध्यान अवश्य करें। शत्रुपक्ष की बातें छोड़ने की चेष्टा करें और अपने घर में सजी चीजों का आनन्द लें। घर लौटने का रस पैदा होते ही मन की एकाग्रता सधेगी।

रस जगना जरूरी है। 'रसो वै सः' वह रस रूप है। अपना घर तभी अच्छा लगेगा, जब इसके प्रति रसमयता जगेगी। रसमयता मन की एकाग्रता की नींव है। पिएँ हम रसमयता के प्याले-पर-प्याले, जिससे सफल हो सके ध्यान, पा सकें हम ध्यान के जरिये अपने घर को, लक्ष्य को, मंजिल को। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राग-द्वेष से छूटने के लिए कोई सूर्य की आतापना लेता है तो कोई शीर्षासन करके खड़ा हो जाता है। यह मात्र खूँटे बदलने जैसा हो गया। शीर्षासन करने से कभी राग टूटता है? सूर्य की आतापना लेने से कभी मोह जलता है? पहले पैर के बल चलते थे, अब शीर्ष के बल खड़े हैं। पहले चूल्हे की आग के पास बैठते थे, अब सूर्य की गरमी ले रहे हैं। पर बदला कुछ नहीं। यदि चित्त में वीतराग और वीतद्वेष के भाव उठ गये तो शीर्षासन दो कोड़ी का भी नहीं रहेगा। हमें गिराना है राग को, न केवल राग को; अपितु द्वेष को भी।

आतापना का सम्बन्ध हम जोड़ लेते हैं काया से। जबकि इसका सम्बन्ध है आत्मा से। आत्मा को तपाने का नाम ही आतापना है। शीर्षासन सिर को आसन बनाना नहीं है, वरन् दुनिया के आसन से स्वयं को ऊपर करना है। आतापना या शीर्षासन आदि का जैसा आम अर्थ है, उससे काययोग सधेगा। काययोग आत्मयोग नहीं है। आत्मा पार है मन के, वचन के, काया के। ये तीनों चट्टानें हैं आत्म-स्रोत की। इनसे कैसा राग! सबसे पार होकर निरखो स्वयं को, अपने आपको। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वयं के द्वारा स्वयं को स्वयं में देखने की प्रक्रिया स्वच्छ ध्यान है। स्वयं से मुलाकात हो जाने का नाम ही आत्मयोग है। ध्यान अन्तर्यात्रा। वह भीतर का बोध कराता है। मन का हर संवेग वह सुनाता है। ध्यान के समय मन का भटकाव फिसलन नहीं है, अपितु अन्तरंग में दबे-जमे विचारों का प्रतिबिम्ब है। ध्यान अगर ऊपर-ऊपर होगा, तो वह ऊपर-ऊपर के विचार जतलाएगा। जो यह कहते हैं कि ध्यान के समय हमारा मन टिकता नहीं, वे ध्यान नहीं करते, वरन् ध्यान के नाम पर औपचारिकता निभा रहे हैं। ध्यान ज्यों-ज्यों गहरा होता जाएगा, त्यों-त्यों विचार भी गहरे होते जाएँगे। वे बड़े पके हुए और सधे हुए फल होंगे। समाधि के क्षणों में आने वाले विचार आत्म-ज्ञान की झंकार है। समाधिमय जीवन में उभरे विचार स्वयं की भागवत अभिव्यक्ति है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान इस धरती पर स्वर्णिम सूर्योदय है। ध्यान हमें सिखाता है घर आने की बात, नीड़ में लौटने की प्रक्रिया। चित्त परमाणुओं की ढेरी है। परमाणु जीवन-जीवी नहीं होते। ध्यान चित्त को चैतन्य बनाने की गुंजाइश है। लोग समझते हैं कि ध्यान मृत्यु है, वह हमें अपनी चित्तवृत्तियों को रोकना सिखाता है। जबकि ऐसा नहीं है। ध्यान से बढ़कर कोई जीवन नहीं है। वह हमें रुकना या रोकना नहीं सिखाता, वरन् लौटना सिखाता है। वह तो यह प्रशिक्षण देता है कि इसमें गति करो। जितनी तेज रफ्तार पकड़ सको, उतनी तेज पकड़ लो। जब स्वयं में समा जाओगे, तो स्थितप्रज्ञ बन जाओगे। जहाँ अभी हम जाना चाहते हैं, वहाँ गये बिना ही सब कुछ जान लेंगे। उसकी आत्मा में प्रतिबिम्बित होगा सारा संसार। परछाई पड़ेगी संसार के हर क्रिया-कलाप की उसके घर में पड़े आईने में। यह असली जीवन है। यह वह जीवन है, जिसमें दौड़-धूप, दंगे-फसाद, आतंक-उग्रवाद की लूएँ नहीं चलतीं। यहाँ तो होती है शान्ति, परम शान्ति, सदाबहार। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधि समाधानों का केन्द्र है। समाधान तो हजारों किस्म के होते हैं, पर समाधि समाधानों-का-समाधान है। यह उत्तरों-का-उत्तर/अनुत्तर है। भला, जो जगमगाहट सूरज में है, वह ग्रह-तारों में कहाँ से हो सकती है! उसकी उजियाली बादल ढाँक नहीं सकती। इसलिए समाधि अन्तर-व्यक्तित्व के विकास की समग्रता है। ध्यान इसमें मददगार है। अचेतन मन को राहत देना ध्यान की प्रफुल्लता है। रोजमर्रा की तनाव भरी जिन्दगी में भी मानसिकता तथा प्रफुल्लता को अंकुरित करना ध्यान की मौलिक देन है।

ध्यान और समाधि कोई चमत्कार नहीं है। यह चित्त के साथ एकाग्रता तथा वास्तविकता की दोस्ती है। चमत्कार मायाजाल भी हो सकता है पर समाधि बाजीगरी और मदारीगिरी नहीं हो सकती। चमत्कार हर आदमी नहीं कर सकता, पर समाधि हर आदमी पा सकता है। तन्द्रा टूटी कि समाधि की देहरी पर पाँव रखा।

किसी ने मुझ से पूछा कि मन्दिर में घन्ट क्यों बजाया जाता है? क्या भगवान् को जगाने के लिए?

मैंने कहा, नहीं। मन्दिर में घन्ट बजाया जाता अपने आपको जगाने के लिए, स्वयं को तन्द्रा से उबारने के लिए। ताकि दुनिया जहान के बिखराव और भटकाव को रोककर मन्दिर में एकाग्रचित्त हो सके। मन्दिर हमारी श्रद्धा का घर है। जहाँ चित्त शान्ति और समाधि का आलिंगन करे, वही मन्दिर है। घण्टा भीतर के लिए जाग-घड़ी है। उसे सुनकर यदि खुद जग गये, तो खुदा जगा है। खुद भी न जगे, तो खुदा को क्या जगाओगे! वह जाग्रत के लिए जाग्रत और सुप्त के लिए सुप्त/लुप्त है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधि भीतर की अलमस्ती है। चेहरे पर दिखाई देने वाली चैतन्य की प्रसन्नता में इसे निहारा जा सकता है। यह किसी स्थान-विशेष की महलनुमा सोनैया संरचना नहीं है, न ही कहीं का स्थानपति होना है, वरन् अन्तरंग की खुली आँखों में अनोखे आनन्द की खुमार है। वह हार में भी मुस्कुराहट है, माटी में भी महल की जमावट है। समाधि शून्य में विराट् होने की पहल है। वासना-भरी प्यासी आँखों में शलाई घोंपने से समाधि रोशन नहीं होती, अपितु भीतर के सियासी आसमान की सारी बदलियाँ और धुंध हटने के बाद किरण बनकर उभरती है।

समाधि तो स्थिति है। वहाँ वृत्ति कहाँ! प्रवृत्ति की सम्भावना से नकारा नहीं जा सकता। वृत्ति का सम्बन्ध तो चित्त के साथ है, जबकि समाधि का दर्शन चित्त के पर्दे को फाड़ देने के बाद होता है। चेतना का विहार तो चित्त के हर विकल्प के पार है। समाधि में जीने वाला सौ फीसदी अ-चित्त होता है, मगर अचेतन नहीं। चेतना तो वहाँ हरी-भरी रहती है। चेतना की हर सम्भावना समाधि की सन्धि से प्रवर्तित होती है। उसे यह स्मरण नहीं करना पड़ता कि मैं कौन हूँ। उसके तो सारे प्रश्न डूब जाते हैं। जो होता है, वह मात्र उत्तरों के पदचिह्नों का अनुसरण होता है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मोक्ष साधना का समग्र निचोड़ है। इसका लक्ष्य साधना का प्रस्थान-केन्द्र है और इसकी प्राप्ति उसका विश्राम-केन्द्र।

मोक्ष मृत्यु नहीं ; मृत्यु-विजय का महोत्सव है। आत्मा की नग्नता/निर्वस्त्रता/कर्ममुक्तता का नाम ही मोक्ष है। मोक्ष की साधना अन्तरात्मा में विशुद्धता/स्वतन्त्रता का आध्यात्मिक अनुष्ठान है।

मोक्ष संसार से छुटकारा है। संसार की गाड़ी राग और द्वेष के दो पहियों के सहारे चलती है। इस गाड़ी से नीचे उतरने का नाम ही मोक्ष है। मोक्ष गन्तव्य है। वह वहीं/तभी है, जहाँ/जब व्यक्ति संसार की गाड़ी से स्वयं को अलग करता है।

मोक्ष निष्प्राणता नहीं, मात्र संसार का निरोध है। संसार में गति तो है, किन्तु प्रगति नहीं। युग युगान्तर के अतीत हो जाने पर भी उसकी यात्रा कोल्हु के बैल की ज्यों बनी रहती है। भिक्षु/साधक वह है, जिसका संसार की यात्रा से मन फट चुका है, विमोक्ष में ही जिसका चित्त टिक चुका है। संन्यास संसार से अभिनिष्क्रमण है और मोक्ष के राजमार्ग पर आगमन है।

संसार साधक का अतीत है और मोक्ष भविष्य। उसके वर्धमान होते कदम उसका वर्तमान है। वर्तमान की नींव पर ही भविष्य का महल टिकाऊ होता है। यदि नींव में ही गिरावट की सम्भावनाएँ होंगी, तो महल अपना अस्तित्व कैसे रख पायेगा ? मोक्ष साधनात्मक जीवन-महल का स्वर्णिम कंगूरा/शिखर है। अतः वर्तमान का सम्यक् अनुद्रष्टा एवं विशुद्ध उपभोक्ता ही भविष्य की उज्ज्वलताओं को आत्मसात् कर सकता है। प्रगति को ध्यान में रखकर वर्तमान में की जाने वाली गति उजले भविष्य की प्रभावापन्न पहचान है। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मोक्ष चेतना की आखिरी ऊँचाई है। उसके बारे में किया जाने वाला कथन प्राथमिक सूचना है, शिशु की तोतली बोली में बारहखड़ी है। मोक्ष तो सबके पार है। भाषा, तर्क, कल्पना और बुद्धि के चरण वहाँ तक जा नहीं सकते। वहाँ तो है सनातन मौन, निर्वाण की निर्धूम ज्योत। □

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मैं तो तेरे पासमें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org